अध्याय - दस

राजसूय

भुजंगप्रयात

समाहूति धर्मज्ञ की कौन टाले ।
बड़ी युक्ति से प्रेम के पाश डाले ॥
चले हैं असंख्यात[1] राजा पुरी को ।
बड़ा मान दे नीति की चातुरी को ॥1॥

बने हेम के तुंग हैं सौध[2] सारे ।
नया मेरू ज्यों अर्कजा[3] के किनारे ॥
समीपस्थ ही क्या बनी अन्य लंका ।
कुबेरादि को घोर होती कुशंका ॥2॥

हुआ वारि पत्राभ[4] सा सूर्यजा[5] का ।
घटावर्ण काला घटातीं पताका ॥
दिशा वायु की दूर ही से बतातीं ।
बड़ी चंचला हो द्विजों को सतातीं ॥3॥

धराकांतिधारा विचित्रा विलोकी ।
हुए विस्मिताधी अमानी[6] द्युलोकी[7] ॥
स्वप्रौढ़त्व आभास से हो सलज्जा ।
पुरी इन्द्र की चाहती और सज्जा ॥4॥

अजातारि ने यज्ञ आयोजना की ।
हुए हृष्ट भारी समेताग्नि नाकी[9] ॥
हविष्यान्न से शक्ति ले के नवीना ।
करें सृष्टि को आशु ही दैत्यहीना ॥5॥

बहु राजा गण से विभूषिता ।
लगती भारत वर्ष ही हुई ॥
बहु रत्नाखचिता महासभा ।
प्रतिबिम्बीकृत है अनेकता ॥6॥

1. असंख्य, अनगिनत	4. पत्ते जैसे हरे रंग का	7. देवता
2. राजमहल	5. यमुना	8. अजात शत्रु, युधिष्ठिर
3. यमुना	6. मान रहित	9. देवता

गर्हणीय[1] जिनको रहे, सदा दनुजकृत कार्य ।
मयकृतिशंषारति[2] निरत, यह कैसा औदार्य ॥7॥

हरिगीतिका छंद

अभिनन्दनोत्सुक नंद नंदन, के समुद नरपति चले ।
नतषीष मुररिपु[3] को लगाया, पार्थ[4] ने बढ़कर गले ॥
है एक धर्मज तो अपर हैं, धर्म के आदिम पिता ।
लीला करें पर मान अग्रज, उन्हीं को लोकोचिता ॥8॥

अपनोदनोचित[5] जो सकल, जग वेदना भय क्लान्ति के ।
उनसे कुशल हैं पूछते, कौन्तेय विग्रह शान्ति के ॥
फिर अध्वरानुष्ठान[6] का, संकल्प निज ज्ञापित किया ।
अनुरोध सब अवरोध के, हरणार्थ फिर उनसे किया ॥9॥

हो क्यों न अब निर्बाध शुभ यह, कार्य शमितविरोध हो ।
यज्ञेष की महती कृपा से, विघ्न का सुनिरोध हो ॥
प्रतिरोध आशंका न सत्पथ, से कभी विचलित करे ।
जगभूति कृतलक्षितचरित नर, अभय हो संतत करे ॥10॥

जययोगजा सम्पत्ति का, धर्मार्थ ही उपयोग है ।
वे धन्य हैं धन का जिन्हें, अवगम्य[7] शुभ विनियोग है ॥
है पुण्य संचय अमित तव, जो प्राप्त यह मखयोग[8] है ।
जगतापपापवियोगहित, स्वीकार्य हर अभियोग है ।।11॥

स्वीकृत थी चक्रवर्तिता,
धर्मज की अब सर्वलोक को ।
भारत थे भानुमान से,
राजित रक्षित चक्रपाणि से ॥12।।

(मंजुभाषिणी वृत्त)
सुलभा अतीव जिनमें गुणज्ञता ।
क्षितिपाल[9] भालमणि विष्व के बने ॥
नयमार्ग ही सफलता प्रभाव का ।
सब जान लें सुगम स्त्रोत एक है ॥13॥

1. निंदा के योग्य	2. मयदानव की रचना प्रशंसा
3. श्रीकृष्ण	4. युधिष्ठिर
5. दूर करने में समर्थ	6. यज्ञ
7. जानने योग्य	8. यज्ञ का सुयोग
9. राजा	

विपुलाज्य[1] औषधि हविष्य आदि से ।
करने लगे मुदित हव्यवाह[2] को ॥
श्रुति मंत्र गुंजित हुई महासभा ।
अनुभूत पूत करती प्रवाह को ॥14॥

करके समस्त विधि पूर्ण यज्ञ को ।
कर तुष्ट याचक अभीष्ट लाभ से ॥
कृतदक्षिणादृतद्विजातिसंघ ने ।
सरिताज[3] से विनत प्रश्न ये किया ॥15॥

सबका समादर विधेय मानता ।
किससे प्रवृत्त पर हो समर्चना ॥
मति हो रही न मम निश्चयात्मिका ।
ऋतसाधिका सकल हो भवत्कृपा ॥16॥
(रथोद्धता वृत्त)

ज्ञात है सकल धर्म हे कृती ।
किन्तु दर्षित अतीव नम्रता ॥
पूछते शुभद कार्यजात को ।
प्रीत हूं तनुज पूज्यभाव से ॥17॥

षास्त्र सम्मत विधान है यही ।
षष्ठ हैं उचित अर्घदान को ॥
स्नातकेष्टगुरूभूमिपाल ही ।
माननीय अथवा जमातृ है ॥18॥

हों जहां सकल एक साथ ही ।
सर्वश्रेष्ठ उनमें समर्च्य[4] है ॥
भानुकान्ति जितदैत्य कृष्ण की ।
लोकमान्य सुत है वरेण्यता[5] ॥19॥

मूढ़तामलिनबुद्धिज्ञेय क्यों।
हों त्रिमूर्ति हरि विश्वनाथ ये ॥
जानती न यतितीक्ष्णषेमुषी[6] ।
आदि अंत युत सृष्टि से परे ॥20॥

1. पर्याप्त घी	3. भीष्म	5. श्रेष्ठता
2. अग्नि	4. पूज्य	6. बुद्धि प्रज्ञज्ञ

(सवैया)

वारिधि मंथन हेतु प्रयुक्त इलाधर[1]
मंदर[2] को दृढ़ता से ।
आश्रय युक्त किया जिसने हरि
भिन्न नहीं उस कच्छपता से ।
मीन महान बने जलप्लावन[3] जात
सुत्रात किया विपदा से ।
उध्दत की वसुधा बन कोल[4]
गभीर नदीपतिजा[5] परिखा से ॥21॥
दानुज कोप प्रपीडित भक्त हितार्थ
समागत सत्वर त्राता ।
भास्कर अंशु समान सटाधर[6]
सिंह समान नभान्तप्रमाता ।
वज्र समान कठोर नखाग्र हुए
शित[7] आयुध मृत्युविधाता ।
दारित[8] दानव वक्ष सकोप नृसिंह
हुए जग के शमदाता[9] ॥22॥

वामन आकृति से छलते यह
विक्रमवान बली बलि[10] को भी ।
मांग धरा त्रिपदा वशनीत
किया असुरेश्वर को यश शोभी ।
अध्वर[11] पूर्ण हुआ शिवजातट[12]
देख रहा नृपराज अलोभी ।
धारित शीश त्रिविक्रम[13] के पद
ईश बना नर अर्पित जो भी ॥23॥
क्षत्र हुए जब धर्म विहीन
किया परितप्त निरीह प्रजा को ।
विप्र किये अवधीरित[14] धीयुत
शक्तिमदोद्धतजा विपदा को ।
दूर किया जमदग्नि अपत्य[15]
बने हरि[16] धार प्रचण्ड विभा को ।
हैहय[17] को यमलोक दिया बहु
बार किया नृपहीन धरा को ॥24॥

1.पर्वत	5. समुद्र से उत्पन्न	9. शान्तिदाता	13. वामन भगवान
2. मंदराचल	6. केशर या अयाल युक्त	10. असुरराज बलि	14. अपमानित
3. जलप्रलय	7.तीक्ष्ण, पैने	11. यश	15. संतान
4. वराह	8. विदीर्ण	12. नर्मदा तट	16. विष्णु
17.माहिष्मती शासक हैहयवशी सहस्त्रार्जुन			

राम बने अभिराम यही अज
पुत्रद[1] पूर्ण किया वचनों को।
पावनकर्म निवारक पीड़क मार
किया गतबाध[2] वनों को।
रावण मार महारण में कर
बंधन मोचित देव जनों को।
लोक किया अनुरंजित हो नृप
दीर्घ दिया सुख तृप्त मनों को ॥25॥
द्वापर में युदवंज हो अज[3]
होकर भी प्रकटे अवतारी।
सृष्टि अशेष धरी निज अंश
उन्हें किस भांति लगे गिरि भारी।
मत्तगजेन्द्र निषूदित कंस
दिया निजधाम न था अधिकारी।
बाण[4] सभौम[5] परास्त करे
यवनादिक[6] मुक्त करी क्षिति सारी ॥26॥
(पुष्पिताग्रा वृत्त)
श्रवण कर गिरा नदीज[7] की वे।
मुदित पृथाज[8] चले अशंषयात्मा॥
परम विनत भाव से समर्चा।
कर हरि की अनुयात[9] भूति[10] से थे ॥27॥
(वियोगिनी वृत्त)
हरि की वह अर्चना हुई शिशुपालान्तर को सुदुस्सहा।
अभिमानभरे मनुष्य को पर उत्कर्ष अमर्ष[11] स्त्रोत है ॥28॥

मदयुक्त गजेन्द्र सा हुआ अवहेलीकृत सर्ववर्जना।
अभिदीपित मन्यु[12] सर्प सा गरलोद्गार प्रवृत्त हो गया ॥29॥
इस पावन मन्यु[13] को किया हरिपूजाकृत धर्मराज ने।
अपमानद[14] भूमि भूपता[15] फिर भी है गतमन्यु[16] क्यों यहां।। 30॥

1. दशरथ द्वारा दिया गया	5. नरकासुर सहित	9. अनुगत	13. यज्ञ
2. निर्बाध	6. कालयवन आदि	10. कल्याण	14. अपमान करने वाली
3. अजन्मा	7. भीष्म	11. क्रोध	15. राजागण
4. बाणासुर राजा बलि के पुत्र	8. युधिष्ठिर	12. क्रोध	16. बिना क्रोध के

(हरिगीतिका)

वय बीतते वपु क्षीण होता, बुद्धि पर होती नहीं ।
क्या बुद्धि का आधार ही यह, तर्कणा[1] खोती नहीं ॥
यदि ऊर्ध्वरेता[2] भी धरातल, सत्य से परिचित नहीं ।
उनकी अवज्ञा भी तुम्हें थी, पृथासुत अनुचित नहीं ॥31॥

बस कन्यका जन अपहरण में, दर्षिताखिल शूरता ।
लगता वही है पूज्य तुमको, जो करे यह क्रूरता ॥
विद्या दिखाने धनुष की तुम, जननिपथरोधक बने ।
बतला रहे अब धर्मसुत को, धर्म अवबोधक बने ॥32॥

सम्मान्य अब तक हो बने, दोषी रहे गुरूद्रोह के ।
अब धारते हो सूत्र भी, चिरप्रतिष्ठित नयद्रोह[3] के ।
भोगा निरंतर राजसुख, संरक्षणादिक व्याज[4] से ।
कुरूबद्धदृष्टि तुम्हें नहीं, कुछ अर्थ राजसमाज से ॥33॥

कहने लगे गांगेय[5] तब, शिशुपाल तुम शिशु ही रहे ।
कटु वाक्य तव इस हेतु ही, हमने सभा सम्मुख सहे ।
होती जगत में मति सदा, यदि देह की अनुसारिणी ।
पृथुकाय जन पीड़ित नहीं, होती विपुल यह धारिणी[6] ।।34॥

(वंशस्थ वृत्त)

न जानता पौरूष हीनता बनी
अखण्ड कौमार व्रतादि हेतुता
अनादृता की अपहारिता सुता
प्रशस्य[7] काशीपति की अलज्ज हो ॥35॥

नहीं रही संगति कर्म वाक्य में
हिमाद्रि[8] भूलिंग[9] विहंग साम्य को ॥
नदीज हो प्राप्ततरंगलोलता[10]
नहीं मनीषा[11] तव सुस्थिरा कभी ॥36॥

समस्त भूमंडल भूप दे रहे
तुम्हें वयाधिक्य[12] प्रजात मान्यता
परंतु मानोद्धत हो प्रदान की

1. तर्क पध्दति	2. नैष्ठिक ब्रह्मचारी	3. नीति से विद्रोह	4. बहाने से
5. भीष्म	6. पृथ्वी	7. प्रशंसनीय	8. हिमालय पर्वत
9. एक पक्षी जो 'मासाहसम्' की ध्वनि करता है ।			
10. चंचलता	11. बुद्धि	12. वृद्ध होने से	

कौन्तेयकृत यह यज्ञ पावन, क्यों विवादास्पद बने ।
सम्मान्य सब हैं अतिथि भूपति, घन प्रणयरस से सने ।
नरमेधता को प्राप्त हो मत, क्रतु[1] यही मति धारकर ।
मानी अमेयात्मा[2] सुविक्रम, चुप रहे मन मानकर ॥38॥

रहते सदा ही गोप यादव, था उचित यह सर्वथा ।
पर गोप[3] बनना अब तुम्हारा, मानिजन की है व्यथा ।
अभिशप्त यदुकुल है ययातिद[4], शाप भी विस्मृत हुआ ।
चेष्टा अनधिकृत है तुम्हारी, आचरण कुत्सित हुआ ॥39॥

अन्यत्र होकर रणविमुख, जाते नहीं हरि विक्रमी ।
तुम छोड़ मथुरा द्वारिका, प्रस्थित हुए बनकर क्षमी ।
मगधेश[5] विक्रमताप से, परितप्त भी त्यागी प्रजा ।
त्यागे प्रथम पालक सखा, गोपी व्यथित वृषभानुजा[6] ॥40॥

(वंशस्थ वृत्त)
पतत्रि[7] भोगी[8] वृषभादि मारना
यही बड़े कार्य किए दशार्ह ने
न युद्ध शिक्षायुत थे निरीह वे
यही दिलाते हरि अर्घ अर्हता ॥41॥

अक्षम्य नारी अपघात शास्त्र में
कहा गया गोवध पाप ही महा
महानता मण्डित आज पातकी
किया गया संसद में अनर्थ है ॥42॥

(हरिगीतिका)
शिशुकृतप्रलापोपम समझ, शिशुपालकृत अपशब्दता ।
सुरसरितनय मानस गगन, ने की न गत विगताब्दता[10] ।
नवदन्तप्रस्फुरणोचिता, वय के चपल अति बाल का ।
सह काटना लेती जननि, हो मुदित चुम्बन भाल का ॥ 43॥

पर जब सतत आक्षेप हरि पर, किए रूष[11] विक्षिप्त ने ।
पूर्वाग्रहों से ग्रस्त मानी, असूया अवलिप्त[12] ने ।
तब देवव्रत नर देववत वे, दीप्यमानावेष से ।
कहने लगे मानो मुखर निज, भक्ति के आदेश से ॥44॥

1. यज्ञ	5. जरासंध	9. कृष्ण
2. महात्मा महामनस्वी	6. राधा	10. मेघ रहित होना
3. पृथ्वी पालक	7. पक्षी	11. क्रोध
4. राजा ययाति द्वारा प्रदत्त	8. सर्प	12. घमण्डी

राजहंस की धवलता, गुण है या कि विकार ।
वायस यह निर्णय करे, छलग्रहीत अधिकार ॥45॥

हरिगीतिका छंद

लीला पुरूष मायोपहत नर, को न इनकी विष्णुता ।
दिखती कभी करूणा न फैली, भूतहित प्रभविष्णुता ।
उनका यहां पर अग्रपूजन, अमर्षित जिस भूप को ।
वह दर्शनोत्सुक अचिर देखे, रवितनय[1] के रूप को ॥46॥

फिर उठे सहसा अर्क[2] सम, उद्यत किया कोदण्ड[3] को ।
विश्वजितमखविघ्नकर कटु, रहे प्रस्तुत दण्ड को ।
जिष्णुता[4] पाखण्ड खण्डन, हेतु सक्षम सर्वदा ।
आहूत करता हूं उन्हें, जिनकी युयुत्सा[5] दुर्मदा ॥ 47॥

यह सुन गतस्मय[6] हुए पर[7], विस्मय भरे थे पक्षधर ।
वसु[8] थे वहां वसुमान[9] से, विकिरितविभा अतिसय प्रखर ।
कटुवाक्यपटु वह चेदिपति, भी मूक क्षण भर को हुआ ।
फिर प्रसृत होकर कोप ने, हर पर नृपति का उर छुआ ॥48॥

गीतिका छंद

कोप से अवरूद्ध वाणी, थी गया कर बाण पर ।
बाण था आरक्त लोचन, असुरपति बलयुत प्रखर ।
नरकसुत[10] मानी वहां पर, कोपकम्पितगात्र था ।
वक्रदन्तानन[11] विभंगी, से जनित भय मात्र था ॥49॥

कण्टकिततनु[12] रक्त कुसुमित, गरलदुरम वत दुरम हुआ ।
पूर्ववृत्तानुस्मरण से, रूक्मिमुख विद्रुम[14] हुआ ।
पुन: वर्धितमन्यु चेदिप[15], विवृत ज्वाला मुख हुआ ।
पाण्डवेय अरातिजनमन, निभृत[16] उत्थित सुख हुआ ॥50॥

अट्टहासज रव सुभैरव, वहां पर गुंजित हुआ ।
कोप बल बहुमान सद्य:[17], सदन में पुंजित हुआ ।
सकल पाण्डव नम्रता से, विविध अनुनय कर रहे ।
कृष्ण के संकेत कामी, धैर्य यादव धर रहे ॥51॥

1. यमराज	5. युद्ध की कामना	9. सूर्य	13. राजा दुरम	
2. सूर्य	6. अंहकार हीन	10. नरकासुर का पुत्र	14. प्रवाल मूंगे के समान	
3. धनुष	7. शत्रु	11. राजा वक्रदन्त	15. शिशुपाल	
4. अजेयता	8. भीष्म	12. रोमांचित	16. छिपा हुआ	17. सहसा

हरीगीतिका छंद

भूलो चतुर्भुजता[1] स्वकीया, शैषवी उस भ्रांति को ।
अब हो नहीं विषमाक्ष[2] चेदिप, रोंदते मख[3] शांति को ।
शुभ कर्म में कृतविघ्न आसुर, भाव मत धारण करो ।
दमघोषसुत[4] तुम घोष विग्रह, का न निष्कारण करो ॥52॥

बोले बली बलराम कटुतर, वाद के सुविराम को ।
अब तक विवक्षाहीन[5] बैठे, रोक वर्धित धाम[6] को ॥
जिह्वाद्विजिह्वा का दलन क्यों, आशु ही करते नहीं ।
हरि[7] गर्जना तक सत्वलघु[8] रव, उपशमित करते नहीं ॥53॥

(तोटक वृत्त)

परितापित है यह विश्व महा ।
खल शक्ति बढ़ी जब से जग में ॥
अपराध सहें जन मौन धरे ।
बढ़ते न समुत्तर के मग में ॥54॥

इससे अतिमान बढ़ा इनका ।
अब हो न अदंडित ये खलता ॥
विष वृक्ष अरूढ़ विनश्य सदा ।
प्रतिकार्य नहीं जब है फलता ॥55॥

यदि रोक सके न अनीति बड़ी ।
बल विक्रम मोघ अरे वह है ॥
मुझको वह कोप सदा लगता ।
अभिवंद्य जिसे अघ[9] दुस्सह है ॥56॥

वह ज्ञान नहीं शुभ हो सकता ।
नर को पुरूषार्थ विहीन करे ।
मतिमंद भले वर है नर जो ।
निजमान हितार्थ कृपाण धरे ।57॥

हरिगीतिका छंद

आक्षेप होते व्यक्ति के, वाणी अपव्यय मात्रता ।
सब व्यक्ति रखते हैं नहीं, हे तात् उत्तरपात्रता ॥
हर प्रश्न उत्तरणीयता, क्या जगत में है धारता ।
वय पद समय बुध[10] स्थान की, अनुकूलता सुविचारता ॥58॥

1. चार भुजा रखने का भाव	2. शिवजी, शिशुपाल शिशुरूप में	
3. यज्ञ	4. दमघोष का पुत्र शिशुपाल	
5. कहने की इच्छा से रहित	6. तेज	7. सिंह, श्रीकृष्ण
8. छोटे पशु, तुच्छ प्राणी	9. पाप	10. विद्वान

भौम सुत[1] अनुयात अतिबल, वह सविग्रह[2] दर्प सा ।
वेग से निकला सभा से, हो पदाहत[3] सर्प सा ।
चला कहते श्रेष्ठता का, विनिर्णय हो समर में ।
भेद जन को ज्ञात हो इस, अवर में मुझ प्रवर में ॥59॥

तूर्यआनक[4] पटह भेरी, घोष रोष विशेष का ।
व्यंजक हुआ वारिज[5] उधर, ध्मात[6] चेदि नरेश का ।
हो गयी सन्नद्ध क्षण में, संगरात्सुक वाहिनी[7] ।
बढ़ चली चतुरंगिणी ज्यों, सजव[8] उर्मिल वाहिनी[9] । 60॥

हरीगीतिका छंद

तब बलोद्धत मान भंजक, अति कुपित बलराम हो ।
कहने लगे सज्जित करो बल, शांति से उपराम[10] हो ।
सहमत हुए बोले गदाग्रज[11], अब हमें रण उचित है ।
संग्राम हित सब भूमिका ही, चेदिभूभुज रचित है ॥ 61॥

यदुवाहिनीनारायणी, अविजेय सम्मुख आ लगी ।
कृतवर्म सात्यकि आदि की, रण ऐषणा[12] भी थी जगी ।
सब वीर तत्पर थे वहां, अति उग्र द्रुत अभियान को ।
देखा अकेले बढ़ रहे, तब द्वारिकापति यान को ॥62॥

गीतिका छंद

कर रहे यह क्या बलानुज, बलनिषूदन[13] अनुज है ।
किए एकाकी निषूदित, इन्होनें बहु दनुज है ।
आज फिर बढ़ते अकेले, सभी विस्मय मग्न थे ।
उधर रिपु के बलाधिप[14] भी, व्यूह ऊह[15] निमग्न थे ॥63॥

बढ़ा आगे उधर से भी, विगतभी शिशुपाल था ।
कोप से वैदूर्यमणि सा, दीप्त उसका भाल था ।
कहा केषव ने कि तुमको, प्राप्त हो मख[16] अष्वता ।
करो निज गुरूता प्रमाणित, और मेरी हनस्वता ॥64॥

व्यर्थ के इस युद्ध में क्यों, वीररक्तनिपात हों ।
नायकों का उचित है यदि, भीम घात प्रघात हो ।
अमलरदकरक्षेप करता, वीर वह हंसने लगा ।
रणपूर्व ही यदुसैन्य को, भय उरग डरने लगा ॥ 65॥

1. नरकासुर के पुत्र सहित	6. फूंका हुआ	11. श्री कृष्ण	16. अष्वमेघ यज्ञ का अष्व
2. मूर्तिमान	7. सेना	12. कामना	17. सर्प
3. जिस पर पैर पड़ गया हो	8. वेगसहित	13. इन्द्र	
4. रण वाद्य	9. नदी	14. सेनापति	
5. शंख	10. त्याग	15. अनुमान, तर्क वितर्क	

हरिगीतिका छंद

तब दीप्तरोषानल सवेपथु , बली चेदि नरेश ने ।
असिपाणि[1] हो आहूत रण को, किया उध्दतवेश ने ।
है जो स्वयं मधु[2] का विनाशक, बताता बाधक मुझे ।
स्वशरीरषोणित अर्घ हो छल, छद्म आराधक तुझे ॥66।

गीतिका छंद

बाण वाणी के हमारा, प्राथमिक उपहार था ।
बाण छोड़े तीक्ष्ण अच्युत, पर अभीक्ष्ण[3] प्रहार था ।
नहीं अब वृष शकट अघ वक[4], प्रभृति तेरे सामने ।
अपकीर्ति अब रणछोड़जा, हो पुष्ट धारित नाम ने ॥67॥

हरिगीतिका छंद

निज वपु रूधिर ही अर्धवत यदि, तुम मुझे देने चले ।
तो सत्य हो वाणी तुम्हारी, क्या कभी होनी टले ।
अपराधषत हैं क्षम्य सुत के, सात्वती[5] को जो दिया ।
वह वचन तुमने मूढ़तावष, स्वयं ही पूरा किया ॥68॥

अब छिन्न चक्र विशुद्धि[6] का हो, अन्त हो दुष्चक्र का ।
छोड़ा कुपित हो चक्र हरि ने, षिरोहर[7] रिपु वक्र का ।
कहते जिसे हैं सुदर्शन पर, दुर्निरीक्ष्या[8] है विभा ।
क्षण मात्र में क्षितिपाल की थी, छिन्न ग्रीवा विसनिभा[9] ।69॥

गीतिका छंद

यज्ञ भू पर भी न मानव, छोड़ता कुप्रवृत्तियां ।
कोप हिंसा मान मद की, प्रवर्धित आवृत्तियां ।
सुधा धारा को तिरस्कृत, वहां भी अज्ञान से ।
ताप का ही वरण करता, नर भरा अभिमान से । ।70॥

चिर छिपा उर में प्रबल पशु बस उसी के त्याग का ।
मनुजभावोन्नयन में ही, है प्रयोजन याग का ।
यदि नहीं होता अनलवत, ही प्रयत[10] होता[11] यहां ।
श्रुति विहित भी कर्म अपनी, सार्थता खोता वहां ॥71॥

मन्यु[12] ने बहु अर्थता निज, सिद्ध कर दी थी वहां ।
प्रयत धर्मज हेतु क्रतु था, सेतु यश का ही जहां ।
कोप भीषण बन गया यह, अमर्षी शिशुपाल को ।
दैन्य बनकर छा गया था, चैद्य जन आबाल को ।72॥

1. तलवार हाथ में लिए	5. शिशुपाल की माता	9. कमलनाल के समान	10. पवित्र
2. मधुदानव , मधुरता	6. ग्रीवा में स्थित यौगिक चक्र	11. हवन करने वाला	
3. बारंबार	7. सिर काटने वाला	12. यज्ञ, क्रोध , दीनता	
4. कृष्ण द्वारा मारे गये वृषासुर, शकटासुर , अघासुर बकासुर, दैत्य	8. जिसे देखना कठिन हो		

(द्रुत बिलम्बित वृत्त)
अमित पाकर मान नरेन्द्र से
सकल भूपति प्रस्थत हो गये ।
परिसमापितयज्ञ प्रथाज से
वचन ये तब अच्युत ने कहे ॥73॥

मिल गयी तुमको अधिराजता
अब न वैरिसमूह अजेय है ।
विगतभीति अत: अब धर्मत:
अनुविधेय प्रजापरिपालना ॥74॥

नित रहो सब बंधु मतैक्य से
वितत[1] हो बस प्रेम दिगन्त में ।
यह महोद्यम ही करणीय हो
सफलता सब भूत विकास है । ।75॥

यह समस्त विभूति मुझे मिली
प्रकटिता तव है महती कृपा ।
विनत प्रेम भरे अवनीष[3] से
कर ग्रहीत विदा हरि थे चले ॥76॥

वरण की जिन ने मख ब्रह्मता
मुनि शिरोमणि व्यास महामना ।
चरण में उनके षिर धारने
बढ़ चले नृप बंधु समेत थे ॥77॥

(मालिनी वृत्त)
अधिगतसमता तत्वार्थज्ञाता मनीषी
नत नृपकृत जिज्ञासा समाधानकारी ।
प्रयतमखधराघाती व्यतीपात को ले
अमुदित[4] मुनि राजा को बताने लगे यों ॥78॥

1. विस्तृत	3. राजा युधिष्ठिर
2. प्राणीवर्ग	4. अप्रसन्न

(बसन्त तिलका वृत्त)

संकेत भारत अमंगल का बड़ा ही
संहार चेदिपति का लगता हमें है ॥
होंगे समस्त वसुधाधिप[1] भूमिषायी[2]
संग्राम में तनय तेरह वर्ष में ही ॥79॥

(मालिनी वृत्त)

सुनकर मुनि वाणी धर्म के पुत्र डूबे
गुरूअनुषय[3] में संदीप्त वैराग्य जागा ॥
यदि नृप क्षय का मैं ही बनूंगा प्रदेष्टा[4]
बहु अपयश भागी भूमि का भार ही हूं ॥80॥

1. राजा	3. भारी दुःख
2. पृथ्वी पर गिरे हुए , मृत	4. निर्देशक